इकाई 23 औद्योगिक मूल्य निर्धारण और बाज़ार संरचना

इकाई की रूपरेखा

23.0 उद्देश्य
23.1 प्रस्तावना
23.2 मूल्य निर्धारण निर्णय
  23.2.1 मूल्य निर्धारण निर्णयों में कठिनाइयाँ
23.3 बाज़ार संरचना की प्रकृति
  23.3.1 बाज़ार की अवधारणा
  23.3.2 बाज़ार संरचना की परिभाषा
  23.3.3 बाज़ार संरचना के प्रकार
  23.3.4 बाज़ार संरचना और मूल्य निर्धारण
23.4 मूल्य निर्धारण सिद्धान्त और रीति
23.5 सीमान्त सिद्धान्त
  23.5.1 सीमान्त सिद्धान्त की सीमाएँ
23.6 व्यवहार में मूल्य निर्धारण
  23.6.1 लागतोपरि अथवा कीमत-लागत अंतर मूल्य निर्धारण
  23.6.2 वर्धमान लागत मूल्य निर्धारण
  23.6.3 निर्धारित मानक प्रतिलाभ दर मूल्य निर्धारण
  23.6.4 स्वीकृति मूल्य निर्धारण
  23.6.5 चालू दर मूल्य निर्धारण
23.7 सारांश
23.8 शब्दावली
23.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें एवं संदर्भ
23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

23.0 उद्देश्य

निर्गत का मूल्य निर्धारण सभी व्यापारिक निर्णयों की चरम पराकाष्ठा है। मूल्य निर्धारण सभी अन्य व्यापारिक निर्णयों की प्रकृति निश्चित करता है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- यह समझ सकेंगे कि व्यापार के लिए मूल्य निर्धारण निर्णय कितना महत्त्वपूर्ण है;
- विभिन्न बाज़ार संरचनाओं में मूल्य निर्धारण निर्णयों की प्रक्रिया की पहचान कर सकेंगे;
- उत्पादकों को सम्यक् मूल्य निर्धारण निर्णय करने में सहायता हेतु विकसित सैद्धान्तिक मॉडलों के महत्त्व को समझ सकेंगे;
- यह समझ सकेंगे कि क्यों प्रत्येक उत्पादक सदैव ही सैद्धान्तिक मॉडलों द्वारा निर्देशित नहीं होता है; और
- अलग-अलग उत्पादकों द्वारा अपनाए गए वैकल्पिक मूल्य निर्धारण व्यवहारों का विश्लेषण कर सकेंगे।

23.1 प्रस्तावना

प्रत्येक आर्थिक व्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी तरह से मूल्यों से संबंधित है। एक उपभोक्ता अपनी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने के लिए कोई वस्तु अथवा सेवा खरीदता है। वह कोई भी जिन्स कितनी मात्रा में खरीदता है, अन्य बातों के साथ, उस जिन्स और अन्य वस्तुओं तथा सेवाओं जिस पर वह अपना धन खर्च करता है के मूल्य पर निर्भर करता है। अतएव, स्वाभाविक रूप से उसका मूल्य से सरोकार होगा क्योंकि वस्तुओं के उपभोग से उसका कल्याण अथवा उपयोगिता लाभ मूल्यों से नियंत्रित होगा।

एक उत्पादक बाज़ार में एक या अधिक वस्तुओं अथवा सेवाओं की आपूर्ति करता है। वस्तुओं के उत्पादन से उसका राजस्व अथवा लाभ बिक्री से प्राप्त मूल्य पर निर्भर करता है। यदि बाज़ार में अपने उत्पादों के लिए उसे अधिक मूल्य मिलता है तो वह प्रसन्न होगा।

इसी प्रकार, हम आर्थिक व्यवस्था में अन्य एजेण्टों के लिए मूल्यों के महत्त्व को देख सकते हैं। एक व्यक्ति जो मूल्य का भुगतान करता है उसके लिए यह एक घाटा है जबकि जो व्यक्ति यह प्राप्त करता है उसके लिए यह फायदा है।

मूल्य निर्धारण की भूमिका संसाधनों के आबंटन के आर्थिक विश्लेषण में केन्द्रीय महत्त्व की रही है। तथापि, इस तथ्य के बावजूद भी कि अलग-अलग बाज़ार संरचनाओं के लिए अलग-अलग मूल्य निर्धारण मॉडल विकसित किए गए हैं, औद्योगिक वस्तुओं के मूल्य निर्धारण में अभी भी अनेक मुद्दे हैं जिनका समाधान नहीं किया जा सका है। ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तविक व्यवहार में मूल्य निर्धारण इन सैद्धान्तिक मॉडलों की अभिधारणाओं से हटकर है।

हम आरम्भ में मूल्य निर्धारण संबंधी सिद्धान्त और तथ्यों में संबंध स्थापित करने में अन्तर्निहित कठिनाइयों को सरल रूप में प्रस्तुत करेंगे। हम अलग-अलग बाज़ार संरचनाओं के लिए उपयुक्त अलग-अलग मूल्य निर्धारण मॉडलों का विश्लेषण करेंगे। अंतत: हम वास्तविक व्यवहार में उत्पादकों द्वारा अपनाए गए कुछ महत्त्वपूर्ण तकनीकों की समीक्षा करेंगे।

23.2 मूल्य निर्धारण निर्णय

मूल्य निर्धारण निर्णय या तो

क) उपभोक्ता अधिशेषों को खींचना है अर्थात् वह स्थिति जब विभेदमूलक मूल्य निर्धारण तकनीकों का उपयोग किया जाता है, आपने ई ई सी-11, में विभेदमूलक मूल्य निर्धारण के बारे में अवश्य ही विस्तार में पढ़ा होगा; अथवा

ख) रणनीतिक मूल्य निर्धारण निर्णय है, जिसमें (i) आरम्भिक मूल्य निर्धारण और (ii) मूल्य परिवर्तन। अब हम इस पर विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

जब एक फर्म पहली बार मूल्य निर्धारित करती है, स्पष्ट है कि मूल्य निर्धारण का कार्य अत्यन्त कठिन होगा। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब एक फर्म बिक्री के लिए नए उत्पाद के साथ व्यापार में प्रवेश करती है अथवा विद्यमान उत्पाद शृंखला में नया उत्पाद जोड़ती है अथवा अपने नियमित उत्पादों को नए भौगोलिक क्षेत्र में उतारती है अथवा अपनी सेवाओं के लिए नया ठेका प्राप्त करती है।

जब एक फर्म उत्पादों अथवा सेवाओं के मूल्यों में परिवर्तन करने पर विचार करती है तो ऐसा अनेक कारणों से हो सकता है, जैसे इसके उत्पादों की माँग में अचानक परिवर्तन हो सकता है अथवा उत्पादन की लागत में परिवर्तन हो सकता है अथवा कुछ अन्य अल्पकालिक कारक, फर्मों को अपने मूल्य में परिवर्तन करने के लिए बाध्य कर सकते हैं जिससे कि इसके उत्पादों अथवा सेवाओं के लिए माँग और पूर्ति में सन्तुलन स्थापित किया जा सके अथवा जब प्रतियोगिता मूल्य परिवर्तन शुरू करती है, जो तथापि, इसके बाज़ार की प्रकृति पर निर्भर करता है कि क्या यह प्रतियोगी है अथवा एकाधिकारी अथवा अल्पाधिकारी बाज़ार है।

तथापि, फर्म द्वारा उत्पादन किए जा रहे उत्पादों की अन्तर्संबंधित माँग और/अथवा लागतों के कारण मूल्य निर्धारण जटिल हो जाता है। जब एक फर्म अनेक उत्पादों का उत्पादन करती है जिनके माँग और/अथवा लागत में अन्तर्सम्बन्ध होता है (अर्थात्, संयुक्त या बहु उत्पाद है)।

23.2.1 मूल्य निर्धारण निर्णयों में कठिनाइयाँ

पिछली शताब्दी या उससे भी पहले से, विभिन्न बाज़ार दशाओं के अनुरूप सैद्धान्तिक मॉडल अर्थशास्त्रियों द्वारा तैयार किए गए हैं। इसी प्रकार, अनुभव सिद्ध अध्ययनों ने अलग-अलग दशाओं में उत्पादकों द्वारा अपनाए गए विभिन्न मूल्य निर्धारण तकनीकों को स्पष्ट रूप से प्रकाशित किया है। तथापि, मूल्य निर्धारण संबंधी सिद्धान्त और तथ्य में तादात्म्य स्थापित करना आसान काम नहीं रहा है।

मूल्य निर्धारण संबंधी सिद्धान्त और तथ्य में तादात्म्य स्थापित करने का काम निम्नलिखित कारकों के कारण कठिन हो गया है :

I) इस संबंध में कोई सर्वस्वीकृत विचार नहीं है कि फर्म वास्तव में कैसे मूल्य निर्धारण संबंधी अपना निर्णय लेती हैं, हालाँकि इस विषय पर किसी न किसी रूप में, बड़ी संख्या में अनुभवसिद्ध अध्ययन मौजूद रहे हैं। इस स्थिति के चार कारण हैं :

   क) विभिन्न अध्ययनों के प्रेक्षण विरोधाभासी रहे हैं।

   ख) दी गई परिस्थिति में उत्पादक अपने कृत्यों के संबंध में जो कुछ कहते हैं अथवा जो कुछ करते हुए प्रतीत होते हैं और वास्तव में वे जो कुछ करते हैं उसके बारे में अनुमान लगाने में भारी कठिनाइयाँ हैं।

   ग) मूल्य निर्धारण संबंधी निर्णय करने की अनेक रीतियाँ हैं और इस बात की पूरी-पूरी संभावना है कि विभिन्न परिस्थितियों में अलग-अलग मूल्य निर्धारण प्रक्रियाओं को अपनाया जाए। इनमें से कुछ को निम्नवत् वर्गीकृत किया जा सकता है।

i)	उत्पाद के प्रकार	:	उपभोक्ता औद्योगिक
ii)	प्रतियोगिता का प्रकार	:	प्रतियोगी अल्पाधिकारी एकाधिकारी
iii)	उत्पाद की अवधि	:	विद्यमान उत्पाद नया उत्पाद

iv) उत्पादन की प्रकृति : एकल उत्पाद
संयुक्त उत्पाद
बहु (परस्पर परिवर्तनीय) उत्पाद
विषमस्तरीय समेकित उत्पाद

v) क्षमता में अंतर : विद्यमान क्षमता का उपयोग
नई क्षमता का पूर्वानुमान

अन्य श्रेणियों को भी सम्मिलित किया जा सकता है किंतु यह सूची अनेक प्रकार की संभव मूल्य निर्धारण स्थितियों को दर्शाने के लिए पर्याप्त है। लगभग सभी वर्गीकरणों को एक-दूसरे से समूहित किया जा सकता है और प्रत्येक समूह से अत्यन्त ही विशिष्ट मूल्य निर्धारण पद्धति का सृजन हो सकता है। अतएव, यह भी हो सकता है कि कुछ प्रयोजनों के लिए कम से कम मूल्य निर्धारण प्रक्रियाओं का सामान्यीकरण उपयोगी नहीं हो।

घ) फर्मों में प्रबन्धन विशेषज्ञता, कार्यान्वयन और प्रयास में अन्तर होता है। इसके परिणामस्वरूप मूल्य निर्धारण को अलग-अलग महत्त्व दिया जा सकता है और मूल्य निर्धारण निर्णय प्रक्रिया की संश्लिष्टता अलग-अलग हो सकती है।

II) प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया में मूल्य निर्धारण को दिए जाने वाले महत्त्व पर असहमति है। कुछ निम्नलिखित परम्परागत घटनाक्रमों ने इसे धुरी के रूप में देखा है। तथापि, अधिक से अधिक अर्थशास्त्रियों ने उत्पादकों के सुपरिचित परिप्रेक्ष्य को स्वीकार करना शुरू कर दिया है जिसमें विज्ञापन, उत्पाद विभेदीकरण, बाज़ार प्रभुत्व इत्यादि के साथ-साथ मूल्य सिर्फ एक और कभी-कभी तो अपेक्षाकृत गौण प्रतिस्पर्धी साधन है। प्रबन्धकीय पदसोपान में अपेक्षाकृत निम्न स्तर जिस पर बार-बार मूल्य निर्धारित किए जाते हैं इस विचार को और पक्का करते हैं कि फर्म के मूल्य बहुधा इसकी प्रतिस्पर्धी रणनीति में आवश्यक रूप से केन्द्रीय नहीं हैं।

III) बहुधा यह पूरी तरह से स्पष्ट नहीं है कि एक उत्पाद के "मूल्य" का अभिप्राय क्या है। बट्टा/छूट (Discount), विशेष पेशकश, भुगतान की रीति, व्यापार के मूल्य, खरीदी गई मात्रा और परिवहन प्रभारों के परिणामस्वरूप वास्तविक लेन-देन मूल्य, प्रकाशित अथवा सारणी में दिखाए गए मूल्य से प्राय: भिन्न होता है। विनिर्माता का मूल्य न सिर्फ थोक विक्रेता और खुदरा विक्रेता के मूल्यों से भिन्न होता है अपितु, इनका प्रभाव भी अलग-अलग होता है। कई औद्योगिक कारोबार मूल्य बातचीत, निविदा या प्रकाशित मूल्य में गोपनीय रूप से कमी करके निर्धारित किए जाते हैं। परिणामस्वरूप, व्यष्टि और समष्टि आर्थिक स्तर पर मूल्य निर्धारण अन्वेषणकर्त्ता को वास्तविक कारोबार मूल्यों के संबंध में जानकारी की कमी की समस्या से जूझना पड़ सकता है।

IV) वह **स्तर** जिस पर मूल्य नियत है को निर्धारित करने वाले कारक और क्या इसमें **परिवर्तन** किया जाएगा और कितना **परिवर्तन** किया जाएगा इसे निर्धारित करने वाले कारक बिल्कुल अलग-अलग हो सकते हैं और इस प्रकार, अलग-अलग प्रकार के विश्लेषणों की आवश्यकता होती है तथा मूल्य किस तरह से निर्धारित किए जाते हैं इस संबंध में अलग-अलग तस्वीर प्रस्तुत करते हैं।

V) सामान्यतया मूल्य सिद्धान्त में मॉडलों की शृखंला सम्मिलित होती है जिसमें से सबकी स्पष्ट रूप से अथवा निश्चित विश्व के निहितार्थ द्वारा यह मान्यता होती है कि लागत और राजस्व वक्र की स्थिति और आकार उत्पादकों को ज्ञात है। किंतु जैसे ही उसमें अनिश्चितता का तत्व आ जाता है मूल्य व्यवहार, जो इन मॉडलों में सुझाया गया है, उससे काफी अलग हो

VI) फर्म विशेष रूप से तैयार उत्पादों का भण्डार रखती हैं। यह उत्पादन और बिक्री के बीच प्रत्यक्ष संबंध को विच्छेदित कर देता है और इस प्रकार फर्मों के लिए अधिक मूल्य विवेकाधिकार का सृजन करता है। यह पुन: नए कारकों को जन्म देता है जो मूल्य मॉडलों की व्यवहार्यता को और कम कर देता है। इसके अतिरिक्त स्टाक परिवर्तनों के अस्तित्व में आने के बाद फर्म प्राय: विसंतुलन मूल्य समायोजन करेगी जिन्हें सामान्यतया संतुलन मूल्य स्तर और इसके निर्धारकों की व्याख्या करने के लिए तैयार मॉडलों के दायरे में नहीं लिया गया है।

उपरोक्त सभी मुद्दों के मद्देनजर संभवत: यह विस्मयजनक नहीं कि मूल्य व्यवहार की व्याख्या करने में कठिनाइयाँ आती हैं।

बोध प्रश्न 1

1) विभिन्न आर्थिक इकाइयों के लिए मूल्य के महत्त्व की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) विभिन्न परिस्थितियों का उल्लेख कीजिए जिसमें फर्म को मूल्य के संबंध में निर्णय लेना पड़ता है।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) क्यों मूल्य निर्धारण संबंधी तथ्यों को सिद्धान्त से जोड़ना कठिन है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

23.3 बाज़ार संरचना की प्रकृति

"बाज़ार संरचना'' विशेष रूप से बाज़ार व्यवहार के आर्थिक विश्लेषण से संबंधित है। आर्थिक सिद्धान्त में यह मान लिया जाता है कि विचाराधीन बाज़ार के प्रकार द्वारा मूल्य निर्धारण और फर्म विशेष का व्यवहार महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित होता है, इस प्रकार पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकारी प्रतियोगिता, अल्पाधिकार और एकाधिकार की स्थितियों के बीच विभेद किया जाता है। इसके अतिरिक्त सार्वजनिक नीतिगत निर्णयों में इन्हें पर्याप्त महत्त्व दिया गया है। यदि विशेष प्रकार की बाज़ार संरचना के साथ कतिपय अवांछित बाज़ार व्यवहार स्वरूप जुड़ा हुआ है, तो कम से कम सिद्धान्त रूप में बाज़ार संरचना में परिवर्तन करके इस समस्या का समाधान किया जा सकता है।

23.3.1 बाज़ार की अवधारणा

आदर्श रूप में बाज़ार की परिभाषा वह है कि जिसमें सजातीय उत्पाद के खरीदार और विक्रेता सम्मिलित हैं, उनमें पर्याप्त परस्पर निकट संबंध है कि उनके बीच एकल खरीद या बिक्री मूल्य प्रचलित है।

सैद्धान्तिक विश्लेषण में यह अवधारणा बिल्कुल स्पष्ट है किंतु व्यावहारिक परिस्थितियों में पहचान की समस्या खड़ी हो जाती है। इसके मुख्यत: दो कारण हैं: (क) उत्पाद विभेदीकरण और (ख) आर्थिक कार्यकलाप में स्थानिक आयाम।

1) **उत्पाद विभेदीकरण** : उत्पाद के अपेक्षाकृत कम क्षेत्रों में क्या बाज़ार के अंदर एक सजातीय उत्पाद की बिक्री का उल्लेख करना सार्थक है। इसलिए, उत्पादों के बीच विभेद करने की समस्या आती है, जो यद्यपि कि विभेदीकृत हैं, एक ही बाज़ार के हैं और अन्य उत्पाद जो, क्योंकि पर्याप्त रूप से अलग हैं, अन्य बाज़ारों के हैं। यह भेद मुख्य रूप से मात्रा का है न कि प्रकार का– यह उत्पादों के बीच स्थानापन्नता की सीमा से संबंधित है, जो कम से कम सिद्धान्त में माँग की प्रति लोच के रूप में माप योग्य है।

$$\text{माँग की प्रति लोच} = \frac{\text{वस्तु की माँगी गई मात्रा में समानुपातिक परिवर्तन } -X}{\text{वस्तु के मूल्य में समानुपातिक परिवर्तन } -Y}$$

जहाँ माँग की प्रति लोच अधिक और सकारात्मक है, उत्पादों के बीच स्थानापन्नता अधिक होती है और इस तरह के उत्पादों को एक ही बाज़ार में बिक्री के लिए विभेदीकृत उत्पाद माना जाता है।

जहाँ प्रति लोच कम है उत्पादों को पृथक माना जाता है और अलग-अलग बाज़ारों में उनकी बिक्री होती है।

2) **स्थानिक आयाम** : सामान्यतया एक बाज़ार की स्थानिक इकाइयों को राष्ट्रीय बाज़ारों के समविस्तारी माना जाता है किंतु व्यवहार में यह या तो अत्यधिक संकीर्ण होगा अथवा, प्राय: खुदरा व्यवसाय की भाँति, अत्यन्त ही विस्तृत।

बाज़ार की चाहे जो भी परिभाषा स्वीकार की जाए यह सामान्यतया उद्योग की परिभाषा से संकीर्ण ही होगी। इसका अभिप्राय यह है कि जो मुख्य रूप से सुपरिभाषित उद्योग आधार पर एकत्र किया जाता है, बाज़ार संरचना के मूल्यांकन के लिए उत्पाद अथवा स्थानिक आधार पर अपर्याप्त रूप से विसमुच्चयित है। इसलिए, व्यवहार में, बाज़ार संरचना का विश्लेषण प्राय: बाज़ार की उस परिभाषा

23.3.2 बाज़ार संरचना की परिभाषा

बाज़ार संरचना से कुछ संगठनात्मक विशेषताओं का पता चलता है जो क्रेता और विक्रेता के बीच अन्तर्संबंध स्थापित करती है। अतएव, बाज़ार संरचना की परिभाषा, "बाज़ार की आर्थिक रूप से महत्त्वपूर्ण विशेषताओं, जो बाज़ार में पूर्ति करने वाली फर्मों का व्यवहार प्रभावित करता है" के रूप में किया जा सकता है।

परम्परागत रूप से बाज़ार संरचना के तीन मुख्य आयामों की पहचान की गई है जो निम्नलिखित हैं : (क) विक्रेता केन्द्रीकरण की मात्रा, (ख) उत्पाद विभेदीकरण का विस्तार, और (ग) प्रवेश शर्तों की प्रकृति। इनमें क्रेता केन्द्रीकरण की मात्रा और एक्जिट दशाओं को भी जोड़ा जा सकता है।

क) **विक्रेता केन्द्रीकरण की मात्रा** : इसका अभिप्राय एक विशेष प्रकार के निर्गत का उत्पादन करने वाली फर्म की संख्या और आकार वितरण से है। इसे अधिक उचित रूप से बाज़ार केन्द्रीकरण के मात्रा के रूप में परिभाषित किया जाता है।

ख) **उत्पाद विभेदीकरण** : ऐसी स्थिति तब होती है जब बाज़ार में समाविष्ट समूह के अंदर अलग-अलग विक्रेताओं के उत्पादों को उपभोक्ताओं द्वारा पूर्व स्थानापन्न के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है। परिणामस्वरूप, वे उत्पाद की एक किस्म के लिए दूसरे की तुलना में अधिक भुगतान करने के इच्छुक रहते हैं और उन्हें किसी उत्पादक की जगह दूसरा उत्पादक बदलने के लिए प्रेरित करना कठिन होता है। उत्पाद विभेदीकरण की विशेषताओं वाले बाज़ार कतिपय असाधारण विशेषताएँ दर्शाते हैं, उदाहरणार्थ, उत्पादकों का मूल्य नीति पर कुछ हद तक नियंत्रण होता है, बाज़ार हिस्सा के अपरिवर्तनीय होने की प्रवृत्ति रहती है, बिक्री दर के अपेक्षाकृत अधिक होने की प्रवृत्ति होती है।

ग) **प्रवेश की दशाएँ** : किसी विशेष बाज़ार में प्रवेश की दशाओं का अर्थ वह सुगमता है जिससे एक नया उत्पाद स्वयं को लाभप्रद तरीके से बाज़ार में स्थापित कर सकता है। एक बाज़ार जिसमें प्रवेश करना पूर्णत: सुगम है मूल्य, दीर्घावधि में, उत्पादन के औसत लागत से अधिक नहीं हो सकता। जहाँ प्रवेश को प्रतिबंधित करने में बाधाएँ प्रभावी हैं, अंतराल मूल्य और औसत लागत के बीच उत्पन्न हो सकता है - अंतराल की सीमा 'प्रतिबंध' की सीमा को दर्शाता है।

23.3.3 बाज़ार संरचना के प्रकार

उपरोक्त विभिन्न विशेषताओं के आधार पर, हम विभिन्न बाज़ार संरचनाओं में भेद कर सकते हैं। आप इन बाज़ार संरचनाओं के संबंध में ई.ई.सी.-11 में पहले ही विस्तारपूर्वक पढ़ चुके हैं। हालाँकि, हम एक बार पुन: निम्नलिखित मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे :

I) **पूर्ण प्रतियोगिता** : एक पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार संरचना की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

क) बाज़ार में बड़ी संख्या में क्रेता और विक्रेता होते हैं, इनमें से प्रत्येक का व्यक्तिगत रूप से बाज़ार मूल्य और उत्पाद की मात्रा पर खास प्रभाव नहीं होता है।

ख) किसी भी एक विक्रेता (अर्थात् फर्म) का उत्पाद बाज़ार में प्रत्येक दूसरे विक्रेता के उत्पाद के सदृश है। अतएव, क्रेता विक्रेताओं के बीच तटस्थ होता है। वह किसी भी विक्रेता से कोई भी उत्पाद खरीद सकता है।

ग) बाज़ार में प्रवेश करने अथवा बाज़ार से निकलने में कोई बाधा नहीं है। विक्रेता और क्रेता जब कभी वे चाहें बाज़ार में आने अथवा बाज़ार छोड़ने के लिए स्वतंत्र हैं।

घ) प्रत्येक क्रेता और विक्रेता को बाज़ार अर्थात् मूल्यों, उत्पाद की प्रकृति, लागत और माँग इत्यादि के बारे में, पूरी तथा सही जानकारी है। विज्ञापन और बिक्री खर्च कुछ भी नहीं है।

ङ) बाज़ार पर कोई भी कृत्रिम नियंत्रण नहीं है। उत्पादन के कारक पूरी तरह से गतिशील हैं। इस तरह की व्यवस्था में किसी भी 'बिचौलिया' जैसे थोक विक्रेता, दलाल, अढ़तिया, खुदरा विक्रेता इत्यादि का अस्तित्व नहीं है। ऐसा माना जाता है कि इस तरह का कारोबार लागत रहित होता है।

च) विक्रेता और क्रेता निर्णय लेने में स्वतंत्र हैं। विक्रेताओं अथवा खरीदारों में किसी भी प्रकार की मिली भगत नहीं है।

II) **एकाधिकार** : पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार चरम स्थिति है– जोकि न्यूनाधिक काल्पनिक है। यदि इसकी मान्यताएँ सत्य नहीं हैं तो हम बाज़ार में अपूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति पाते हैं। एकाधिकार एक अन्य सीमाकारी स्थिति है। बाज़ार की एकाधिकारी संरचना को स्पष्ट करने वाली विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

क) बाज़ार में सिर्फ एक फर्म है जो वस्तुओं की पूर्ति करती है।

ख) फर्म एक अथवा विभेदित वस्तुओं का उत्पादन करती है जिनका बाज़ार में कोई निकट स्थानापन्न नहीं है।

ग) बाज़ार में प्रवेश की अनेक बाधाएँ विद्यमान हैं।

एकाधिकारी फर्म का उत्पाद मूल्य और बाज़ार में उसकी मात्रा पर पूरी बाज़ार शक्ति होता है।

III) **एकाधिकारी प्रतियोगिता** : एकाधिकार और पूर्ण प्रतियोगिता बाज़ार संरचना की चरम सीमाएँ हैं। इनके बीच, एकाधिकार अथवा प्रतियोगिता की मात्रा अथवा कुछ अन्य विशेषताओं में परिवर्तन पर निर्भर कतिपय महत्त्वपूर्ण स्वरूप हैं। एकाधिकारवादी प्रतियोगिता इनमें से एक हैं।

इस बाज़ार संरचना में, फर्मों की संख्या प्रतिस्पर्धी दशाओं के सृजन के लिए पर्याप्त है किंतु साथ ही उनके उत्पाद सदृश नहीं हैं, हालाँकि प्रत्येक का निकट स्थानापन्न है जो उन्हें कुछ एकाधिकारी शक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार इस प्रणाली के अन्तर्गत एकाधिकार और प्रतियोगिता साथ-साथ रहते हैं। यह उत्पाद विभेदीकरण ही है जो इस बाज़ार संरचना को पूर्ण प्रतियोगिता से अलग करता है।

IV) **अल्पाधिकार और अन्य बाज़ार संरचना** : अल्पाधिकारी बाज़ार में अनेक विक्रेता होते हैं जो पर्याप्त रूप से छोटे होते हैं ताकि किसी भी एक विक्रेता की कार्रवाइयों का उसके प्रतिद्वंदियों पर पता चलने योग्य प्रभाव पड़े। अल्पाधिकार के सीमाकारी मामले को द्वयाधिकार कहा जाता है जब बाज़ार में सिर्फ दो विक्रेता सक्रिय रहते हैं। ऐसी स्थिति में जब विक्रेता का उत्पाद सजातीय होता है हम इसे **'शुद्ध अल्पाधिकार'** कहते हैं किंतु जब उत्पाद अलग-अलग होते हैं इसे **'विभेदीकृत अल्पाधिकार'** कहते हैं। मुख्य विशेषता जो अल्पाधिकार को अन्य बाज़ार संरचना से अलग करती है, विक्रेताओं के निर्णयों की परस्पर अन्तर्निभरता को मान्यता प्रदान करना है।

23.3.4 बाज़ार संरचना और मूल्य निर्धारण नीति

एक फर्म की मूल्य निर्धारण नीति, सिद्धान्ततः, बाज़ार संरचना जिसमें वह कार्यसंचालन करता है, की प्रकृति द्वारा प्रभावित होता है।

हम पहले ही विभिन्न बाज़ार संरचनाओं में भेद कर चुके हैं। अब हम विभिन्न बाज़ार संरचनाओं में मूल्य निर्धारण निर्णय किस प्रकार लिए जाते हैं, के बारे में संक्षेप में पढ़ेंगे। विस्तृत विवरण के लिए कृपया ई ई सी -11 देखिए।

क) एक ओर पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार संरचना है, जिसमें बड़ी संख्या में फर्म विद्यमान हैं, वे सभी सजातीय उत्पाद का उत्पादन कर रही हैं। इस प्रकार की बाज़ार संरचना में किसी एक फर्म का बाज़ार पूर्ति अथवा बाज़ार माँग पर कोई प्रभाव नहीं होता है। परिणामस्वरूप, पूर्ण प्रतियोगी फर्म का उस मूल्य पर कोई नियंत्रण नहीं होता है जिस पर वह अपना उत्पाद बाज़ार में बेचेगी। बाज़ार मूल्य का निर्धारण उद्योग की माँग और उद्योग की पूर्ति पर निर्भर करता है। वह मूल्य जिस पर उद्योग की माँग और उद्योग की पूर्ति बराबर हो जाती है उसे संतुलन मूल्य कहते हैं।

प्रत्येक फर्म अपना निर्गत संतुलन मूल्य पर बेच सकती है, अर्थात् एक फर्म का माँग वक्र पूर्ण लोचदार होता है।

दूसरे शब्दों में, पूर्ण प्रतियोगी फर्म प्रचलित-मूल्य स्वीकार करने वाली होती है। उद्योग मूल्य निर्धारित करता है; प्रत्येक फर्म द्वारा इसे स्वीकार किया जाता है।

प्रचलित मूल्य स्वीकार करने वाली फर्म का मूल्य पर कोई नियंत्रण नहीं होता है, किंतु यह निर्गत का स्तर जो यह बेचना चाहेगा के बारे में निर्णय कर सकती है। अर्थात् प्रत्येक फर्म को सिर्फ निर्गत के स्तर और न कि मूल्य के बारे में निर्णय लेना है।

ख) कोई भी बाज़ार जो पूर्ण नहीं है को अपूर्ण बाज़ार की श्रेणी में रखा जाता है, जैसे, एकाधिकार, द्वयाधिकार, अल्पाधिकार, एकाधिकारी प्रतियोगिता। अपूर्ण बाज़ार संरचना में, प्रत्येक फर्म को मूल्य, जिस पर उसे अपना उत्पाद बेचना चाहिए, के संबंध में कुछ मात्रा में स्वतंत्रता होती है। प्रत्येक फर्म को अधोमुखी तिरछे वक्र का सामना करना पड़ता है, अर्थात् यह कम मूल्य पर अधिक बेच सकता है और अधिक मूल्य पर कम। इसे मूल्य निर्धारण निर्णय इस तरह से लेना होगा जो इसके लिए संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक हो।

बोध प्रश्न 2

1) आप बाज़ार से क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) 'बाज़ार संरचना' की परिभाषा कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार और अपूर्ण प्रतियोगी बाज़ारों में अंतर बताइए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

23.4 मूल्य निर्धारण सिद्धान्त और तकनीक

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, विभिन्न प्रकार के बाज़ार में मूल्य निर्धारण निर्णयों की व्याख्या के लिए अर्थशास्त्रियों द्वारा सैद्धान्तिक मॉडल विकसित किए गए हैं। इन मॉडलों में सिद्धान्त जिसे सीमान्त सिद्धान्त अथवा विश्लेषण के रूप में जाना जाता है, अधिकतम लाभ अर्जित करने वाली फर्म के मूल्य निर्धारण व्यवहार की व्याख्या करता है। लाभ अधिकतम करना व्यावसायिक फर्म का प्रमुख उद्देश्य होता है हालाँकि यह आवश्यक नहीं कि यही एक मात्र उद्देश्य हो।

तथापि, फर्म के मूल्य निर्धारण व्यवहार के संबंध में अनुभव सिद्ध अध्ययनों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अधिकतम लाभ अर्जित करने वाली फर्म का दिशा निर्धारण भी सदैव सीमान्त विश्लेषण से नहीं होता है। वे अलग-अलग मूल्य निर्धारण तकनीकों का प्रयोग करती हैं तथा ये तकनीक एक ही बाज़ार अथवा उद्योग में अलग-अलग फर्मों में अलग-अलग होती हैं।

हम पहले मूल्य निर्धारण व्यवहार के सीमान्त दृष्टिकोण का विश्लेषण करेंगे तथा उसके बाद व्यवहार में मूल्य निर्धारण तकनीकों पर उसका प्रभाव देखेंगे।

23.5 सीमान्त सिद्धान्त

सीमान्त सिद्धान्त लाभ अधिकतम करने वाले उपभोक्ता की मान्यता के साथ आगे बढ़ता है। एक बार इस मान्यता को स्वीकार कर लेने के बाद इस सिद्धान्त के अनुसार सिर्फ निर्गत के स्तर और निर्गत की प्रति इकाई मूल्य, जिस पर एक फर्म अधिकतम लाभ अर्जित करने की स्थिति में होगी, का पता करना होता है।

सीमान्त सिद्धान्त में जो कुछ कहा गया है वह यह है कि कोई भी निर्गत निर्णय, जिससे कुल लागत की तुलना में कुल राजस्व में अधिक वृद्धि होती है, से लाभ में वृद्धि होगी। कुल राजस्व वह राशि है जो निर्गत की बिक्री से फर्म को प्राप्त होती है, जबकि कुल लागत निर्गत के उत्पादन पर आया खर्च है। इसलिए यह फर्म द्वारा लिए गए निर्णय के वृद्धिशील/सीमान्त प्रभावों पर केन्द्रित है।

अब, एक वस्तु की अतिरिक्त इकाई की बिक्री के कारण कुल राजस्व में वृद्धि को सीमान्त राजस्व कहा जाता है। मान लीजिए,

$$MR = \frac{\Delta TR}{\Delta Q}$$

जिसमें MR सीमान्त राजस्व है, ΔTR कुल राजस्व में परिवर्तन है ΔQ बेची गई मात्रा में परिवर्तन है।

इसी प्रकार, एक वस्तु की अतिरिक्त इकाई के उत्पादन के कारण कुल लागत में वृद्धि सीमान्त लागत कहा जाता है। मान लीजिए,

$$MC = \frac{\Delta TC}{\Delta Q}$$

जिसमें, MC सीमान्त लागत और ΔTC कुल लागत है।

यह निर्धारित करने के लिए कि क्या लाभ अधिकतम करने वाली फर्म को उत्पादन के वर्तमान दर का विस्तार करना चाहिए, यथा स्थिति बनाए रखना चाहिए अथवा कम करना चाहिए, सिर्फ MR और MC वक्रों की तुलना करनी चाहिए। अर्थात् लाभ अधिकतम करने वाले फर्म को :

$$\left\{\begin{array}{l}\text{वृद्धि}\\ \text{यथास्थिति}\\ \text{की}\end{array}\right\} \text{के अनुरूप निर्गत में } \left\{\begin{array}{l}MR>MC\\ MR=MC\\ MR<MC\end{array}\right\} \text{करना चाहिए।}$$

इस प्रकार, यह देखेंगे कि जब तक $MR > MC$ (MR MC से अधिक है), फर्म अपने निर्गत के स्तर में वृद्धि करके अपना लाभ बढ़ाएगी, तद्नुरूप यदि निर्गत के दिए गए स्तर पर $MR < MC$ (MR MC से कम है) फर्म अपने निर्गत स्तर में कमी करके लाभ बढ़ाएगी। एक फर्म के लिए निर्गत का संबुलन स्तर (अर्थात् निर्गत का लाभ अधिकतम करने वाला स्तर) वह होगा जिस पर इसका सीमान्त राजस्व सीमान्त लागत के बराबर है। निर्गत के अन्य सभी स्तरों पर, लाभ की मात्रा कम होगी।

हम लाभ अधिकतम करने की दशा को गणितीय रूप में निम्नवत् प्रस्तुत कर सकते हैं हम $TT = TR - TC$ से शुरू करते हैं,

जिसमें

TT = कुल लाभ

TR = कुल राजस्व

TC = कुल लागत

इनमें से सभी निर्गत फलन (Q) हैं।

लाभ अधिकतम करने का पहला चरण इस प्रकार है :

Q के संबंध में TT के पहले व्युत्पन्न को लेने और इसे शून्य के बराबर मानने से यह समीकरण आएगा,

$$\frac{dTT}{dQ} = \frac{d(TR)}{dQ} - \frac{d(TC)}{dQ} = 0$$

इसी प्रकार

$$\frac{d(TR)}{dQ} = \frac{d(TC)}{dQ}$$

और

$$MR = MC$$

और लाभ अधिकतम करने के लिए दूसरे चरण में सम्मिलित है : जब हम Q के संबंध में TT के पहले व्युत्पन्न की व्यूत्पत्ति को लेते हैं और शून्य के बराबर मानते हैं।

अब हम संख्यात्मक उदाहरण देखते हैं।

फर्म के लिए माँग फलन

$$P = 20 - 0.5Q \quad \text{होने पर} \tag{1}$$

और कुल लागत फलन

$$C = 15 + 4\ Q + 0.5\ Q^2 \quad \text{होने पर} \tag{2}$$

फर्म के लिए कुल राजस्व (TR) होगा

$$TR = P.Q = (20 - 0.5\ Q)\ Q$$

$$= 20\ Q - 0.5\ Q^2 \tag{3}$$

मान लीजिए कि फर्म अपना लाभ अधिकतम करती है, अर्थात्

$$\text{Max TT} = TR - TC$$

$$= (20\ Q - 0.5\ Q^2) - (15 + 4\ Q + 0.5\ Q^2)$$

अथवा

$$\text{Max TT} = 16\ Q - 1.0\ Q^2 - 15 \tag{4}$$

लाभ अधिकतम करने के लिए पहले चरण में शून्य के बराबर Q के संबंध में TT के पहले व्युत्पन्न को बराबर करने पर, हमें

$$\frac{dTT}{dQ} = 16 - 2Q = 0 \tag{5}$$

प्राप्त होगा,

और Q के संबंध में TT के दूसरे चरण के व्युत्पन्न को लेने पर और इसे शून्य के बराबर रखने पर, हमें लाभ अधिकतम करने का दूंसरा चरण प्राप्त होता है।

$$\frac{d^2TT}{d^2Q} = -2 < 0 \qquad (6)$$

(5) से हमें Q प्राप्त होता है जो 8 के बराबर है, यह फर्म के लिए निर्गत के संतुलन स्तर के बराबर है।

समीकरण (1) में Q = 8 प्रतिस्थापित करने पर मूल्य (P) 16 प्रति इकाई आता है।

और समीकरण (4) से हमें TT= 49 प्राप्त होता है।

इसलिए, यह फर्म अपना निर्गत 16 रु. प्रति इकाई बेचेगी और कुल लाभ 49 रु. अर्जित करती है।

इस प्रकार एक फर्म उस निर्गत स्तर पर उत्पादन और बिक्री करेगा जहाँ MR, MC के बराबर (MR=MC) है। MR के तद्नुरूप मूल्य (अर्थात् निर्गत के संतुलन स्तर परAR (औसत राजस्व = मूल्य) फर्म के मूल्य निर्धारण निर्णय को दर्शाएगा।

एक पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार में एक फर्म मूल्य स्वीकार करने वाली होती है। यह उत्पाद के मूल्य को प्रभावित नहीं कर सकती है, यह उद्योग की माँग और पूर्ति वक्र के मिलन बिन्दु द्वारा निर्धारित मूल्य को स्वीकार करती है। फलत: P = MR है। एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म को सिर्फ यह करना है कि वह निर्गत के स्तर की पहचान करे जिस पर

i) P = MC, और

ii) MC में वृद्धि हो रही है।

यह सीमान्त सन्तुलन के द्वैध चरण के रूप में जाना जाता है।

इसी प्रकार, सभी अन्य बाज़ार संरचनाओं में, एक फर्म निर्गत के उस स्तर पर बिक्री करेगा तथा मूल्य निर्धारित करेगा जहाँ इसका सीमान्त राजस्व सीमान्त लागत के बराबर हो जाता है।

सीमान्त सिद्धान्त की सीमाएँ

सीमान्त उपागम की अनेक सीमाएँ हैं। ये सीमाएँ इस तथ्य की व्याख्या करती है कि व्यवहार में इस उपागम का अत्यन्त ही सीमित प्रयोग है। इस दृष्टिकोण की कुछ महत्त्वपूर्ण सीमाओं को निम्नवत् चिह्नित किया जा सकता है।

i) इस सिद्धान्त की मान्यता है कि व्यावसायिक फर्म का सिर्फ एक ही लक्ष्य होता है- अधिकतम लाभ का लक्ष्य। यह यथार्थवादी मान्यता प्रतीत नहीं होता है।

   एक फर्म एक से अधिक उद्देश्यों जैसे बिक्री अधिकतम करना या राजस्व अधिकतम करना, बाज़ार पर कब्जा करना, शीघ्र नकदी वसूली, उत्पाद श्रृंखला विकास अथवा गैर-आर्थिक उद्देश्य जैसे व्यवसाय में शक्ति या प्रतिष्ठा अर्जित करना से संचालित हो सकती है।

ii) इस सिद्धान्त की एकल-उत्पाद फर्म की भी मान्यता है। संयुक्त उत्पादों और अनेक उत्पादों के मूल्य निर्धारण के लिए इसका प्रयोग यदि असंभव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है।

iii) इस सिद्धान्त में जिस मूल्य पर विचार किया जाता है वह अंतिम मूल्य है अर्थात् वह मूल्य जो उपभोक्ता द्वारा चुकाया जाता है। थोक विक्रय मूल्य और खुदरा विक्रय मूल्य एक साथ नियत करने का कोई प्रावधान नहीं है। वास्तव में, यह मध्यवर्ती उपभोक्ताओं की पूरी तरह से उपेक्षा करता है।

iv) विशेषकर द्वयाधिकार और अल्पाधिकारी बाज़ारों में सैद्धान्तिक दृष्टिकोण के माध्यम से मूल्य निर्धारित करते समय प्रतिस्पर्धी की प्रतिक्रियाओं पर पूरी तरह से विचार नहीं किया जाता है।

v) फर्म के अंदर विभिन्न विभागों के उद्देश्यों में विरोध की इस सिंद्धान्त में उपेक्षा की गई है।

vi) सीमान्त सिद्धान्त में एक फर्म की मूल्य निर्धारण और विपणन रणनीतियों में कोई संबंध नहीं है जबकि व्यवहार में हम उन्हें एक-दूसरे से जुड़ा हुआ पाते हैं।

vii) यह मान लिया जाता है कि फर्म को लागत और माँग-वक्र ज्ञात है। व्यवहार में, इन फर्मों के लिए इन वक्रों का आकलन करना कठिन है। क्योंकि इसके लिए उनके पास आवश्यक दक्षता का अभाव होता है।

viii) सैद्धान्तिक दृष्टिकोण न्यूनाधिक स्थिर है। यह निश्चितता को निश्चित मानकर चलता है। किंतु व्यवहार में, मूल्य निर्धारण के लिए गतिशील दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जिसमें जोखिमों और अनिश्चितताओं की पूरी तरह से गणना की जाती है।

उपरोक्त सीमाओं के कारण व्यवहार में सैद्धान्तिक दृष्टिकोण की प्रयोज्यता नहीं के बराबर रह जाती है।

बोध प्रश्न 3

1) आप (i) सीमान्त राजस्व और (ii) सीमान्त लागत से क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) यह दर्शाएँ कि MR और MC की समानता फर्म के लिए अधिकतम लाभ सुनिश्चित करती है।

.....

.....

.....

.....

.....

3) सीमान्त दृष्टिकोण की चार महत्त्वपूर्ण सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

23.6 व्यवहार में मूल्य निर्धारण

मूल्य निर्धारण व्यवहार के सैद्धान्तिक मॉडलों की गंभीर सीमाएँ हैं। उत्पादकों को सदैव ही अन्य पद्धतियों का सहारा लेना पड़ता है। इनमें से कुछ का विश्लेषण नीचे किया गया है :

23.6.1 लागतोपरि अथवा कीमत-लागत अंतर मूल्य निर्धारण

वास्तविक व्यावसायिक मूल्य निर्धारण के सर्वेक्षण से पता चलता है कि लागतोपरि मूल्य निर्धारण अथवा कीमत-लागत अंतर मूल्य निर्धारण, जैसा कि इसे कभी-कभी कहा जाता है, काफी हद तक व्यावसायिक फर्मों द्वारा प्रयुक्त सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मूल्य निर्धारण पद्धति है। लागतोपरि मूल्य निर्धारण के कई प्रकार हैं किंतु इनमें से सबसे विशिष्ट इस प्रकार है :

फर्म किसी उत्पाद के उत्पादन और विपणन के औसत परिवर्ती लागत का अनुमान लगाती है। वह इसमें उपरि व्ययों को जोड़ती है। इसमें, यह लाभ के लिए प्रतिशत कीमत-लागत अंतर, अथवा लाभ गुंजाइश जोड़ता है।

संक्षेप में,

उत्पाद का अंतिम मूल्य = औसत परिवर्ती लागत + उपरि व्यय + लागत पर कीमत अंतर

कुल परिवर्ती लागतों को कुल बिक्री से विभाजित करके औसत परिवर्ती लागत प्राप्त किया जाता है। सामान्यतया उपरि व्यय अथवा अप्रत्यक्ष लागतों का निर्धारण इन लागतों का फर्म के उत्पादों पर उनके औसत परिवर्ती लागतों के अनुसार विनियतन करके किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी वर्ष के लिए एक फर्म का कुल उपरि व्यय 1.3 मिलियन रु. होने का अनुमान किया गया था, और इसके नियोजित उत्पादन का अनुमानित कुल परिवर्ती लागत 1.0 मिलियन रु. था, तब उत्पादों पर उपरि लागत परिवर्ती लागत का 130 प्रतिशत की दर से विनियतन किया जाएगा। इस प्रकार, यदि किसी उत्पाद का औसत परिवर्ती लागत 1 रु. होने का अनुमान किया गया है, तो फर्म उस परिवर्ती लागत का 130 प्रतिशत प्रभार अथवा 1.30 रु. उपरि व्यय के लिए जोड़ेगा, जिससे 2.30 रु. का अनुमानित पूर्ण विनियतित औसत लागत प्राप्त होगा। इस संख्या में एक फर्म 30 प्रतिशत अथवा 0.69 पैसा मूल्य वृद्धि लाभ के लिए जोड़ेगा जिससे प्रति इकाई मूल्य 2.99 रु. हो जाएगा। सरल रूप में, कीमत-लागत अंतर सूत्र को इस तरह भी लिखा जा सकता है :

$$\text{कीमत-लागत अंतर} = \frac{\text{मूल्य - लागत}}{\text{लागत}}$$

उपरोक्त अभिव्यक्ति में भाष्य (अर्थात्, मूल्य - लागत) को कीमत-लागत अंतर अथवा गुंजाइश कहा जाता है। उपरोक्त उदाहरण में, 30 प्रतिशत कीमत-लागत अंतर की गणना निम्नवत् की जाती है:

$$\text{कीमत-लागत अंतर} = \frac{\text{मूल्य - लागत}}{\text{लागत}}$$

$$= \frac{2.99 \text{ रु.} - 2.30 \text{रु.}}{2.30 \text{ रु.}}$$

$$= 0.30 \text{ अथवा } 30 \text{ प्रतिशत}$$

लागतोपरि मूल्य निर्धारण प्रणाली में मूल्य के निर्धारण का समीकरण निकालने के लिए हम उपरोक्त समीकरण का उपयोग कर सकते हैं। वांछित समीकरण इस प्रकार होगा :

लागतोपरि मूल्य = लागत (1 + मूल्य वृद्धि)

हमारे उदाहरण में, यह समीकरण इस प्रकार प्रयोज्य होगा :

$$\text{लागतोपरि मूल्य} = \text{लागत } (1 + \text{मूल्य वृद्धि})$$

$$= 2.30 \text{ रु. } (1.30)$$

$$= 2.99$$

लागतोपरि-मूल्य निर्धारण पद्धति के मुख्य लाभ इस प्रकार गिनाए जा सकते हैं :

i) यह इस सूत्र के यांत्रिक प्रयोग द्वारा मूल्य नियत करने का अपेक्षाकृत सरल और उपयुक्त पद्धति उपलब्ध कराता है।

ii) अल्पकालिक लाभों के नुकसान पर भी जनसम्पर्क प्रयोजनों के लिए वांछनीय है क्योंकि यह मूल्य वृद्धि 'जिसे उपभोक्ता स्वीकार करेगा' का औचित्य प्रदान करता है।

लागतोपरि-मूल्य निर्धारण की मुख्य सीमाएँ निम्नलिखित हैं :

i) खरीदारों की इच्छा और क्रय-शक्ति की दृष्टि से यथा माप की गई माँग को हिसाब में नहीं लेता है।

ii) प्रतिस्पर्धी की प्रतिक्रियाओं और नए फर्मों की संभावनाओं की दृष्टि से लागतोपरि मूल्य निर्धारण प्रतिस्पर्धा को प्रतिबिम्बित नहीं करता है।

iii) लागतोपरि-मूल्य निर्धारण महत्त्वपूर्ण अवधारणाओं जैसे परिहार्य लागत और विकल्प लागत की महत्त्वपूर्ण अवधारणाओं की भूमिका को मूल्य-निर्धारण निर्णयों के लिए पथ-प्रदर्शक के रूप में मान्यता प्रदान करने में विफल है।

iv) लागतोपरि-मूल्य निर्धारण में, नियत लागत उत्पादन निर्णयों को प्रभावित करता है जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए।

23.6.2 वर्धमान लागत मूल्य निर्धारण

वास्तविक संसार में, माँग और लागत कार्यों को निश्चितता के साथ नहीं जाना जाता है अपितु, उनका अनुमान लगाया जाता है। इसके अलावा, इन कार्यों की ठीक-ठीक प्रकृति और उनके विभिन्न रूपों के संबंध में जानकारी एकत्र करना अत्यधिक खर्चीला हो सकता है। अधिक पूर्ण जानकारी से होने वाले लाभों और इन लागतों में तुलना अवश्य करनी चाहिए। ऐसी स्थिति में, विज्ञापन पर खर्च किए गए अंतिम रुपये के सीमान्त प्रभाव का अनुमान करना अथवा उत्पादित प्रत्येक इकाई की सीमान्त लागत की बिल्कुल ठीक-ठीक गणना करना और फिर उस बिन्दु का पता लगाना जहाँ यह अनुमानित सीमान्त राजस्व के बराबर हो जाता है, व्यावहारिक नहीं होगा।

इन सीमाओं को देखते हुए, अनेक निर्णय वर्धमान विश्लेषण पर आधारित होते हैं। व्यापक अर्थ में वर्धमानवाद में मूल्यों में परिवर्तन करने, किसी उत्पाद का उत्पादन बंद करने अथवा नया उत्पाद पेश करने, नया आदेश स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने या नया निवेश करने के निर्णय के परिणामस्वरूप संभावित रूप से कुल लागत में परिवर्तनों, कुल राजस्व में परिवर्तनों अथवा कुल लागत और राजस्व दोनों में होने वाले परिवर्तनों का अनुमान किए जाने की आवश्यकता पड़ती है। दूसरे शब्दों में, सीमान्त सिद्धान्त को लागू करना है।

वर्धमान तर्क की अवधारणा सरल है किंतु इसे सावधानी से लागू किए जाने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, फर्म की उत्पाद शृंखला से किसी उत्पाद का उत्पादन बंद करने के निर्णय से पूर्व ऐसा करने से होने वाली कुल वास्तविक लागत बचत के मद्देनजर राजस्व हानि का अनुमान लगाना अपेक्षित होगा। निम्नलिखित प्रश्नों का हल करना आवश्यक होगा :

- यदि इस उत्पाद का उत्पादन बंद कर दिया जाता है तो फर्म की उत्पाद शृंखला में अन्य उत्पादों की बिक्री में वृद्धि, यदि कोई है, कितनी होगी?
- उपरि अथवा नियत लागतों में किस सीमा तक कमी आएगी?
- क्या फर्म की उत्पादक क्षमता के उपयोग के लिए अधिक लाभप्रद विकल्प उपलब्ध है?

इस उत्पाद की अन्य विचाराधीन विकल्पों की तुलना में दीर्घकालीन बिक्री और लाभ परिदृश्य क्या है। वर्धमान विश्लेषण के सफल प्रयोग के लिए यह अपेक्षित है कि इन सभी कारकों पर कंपनी द्वारा प्राप्त कुल राजस्व और व्यय किए गए कुल लागत के संबंध में विचार करना चाहिए। सिर्फ तभी निर्णय लिया जा सकता है जिससे अधिकतम लाभ प्राप्त होगा।

इसके लिए दो बातें होनी चाहिए :

एक, यह आवश्यक है कि वर्धमान विश्लेषण पर पूरी तरह से आधारित निर्णय करने से पूर्व यह सुनिश्चित करने के लिए कि समग्र उद्देश्य पूरे किए जाएँ प्रबन्धन में किसी के पास समन्वयकारी प्राधिकार होना चाहिए।

दूसरा, किसी विशेष निर्णय से जुड़े वास्तविक वर्धमान लागत और/अथवा राजस्वों की पहचान के लिए सभी युक्तिसंगत प्रयास करना चाहिए।

एक बार, इसके पूरा हो जाने पर, वर्धमान विश्लेषण फर्म द्वारा सामना की जा रही बहुआयामी निर्णय समस्याओं पर विचार करने में उपयोगी और प्रबल साधन बन जाता है।

23.6.3 निर्धारित मानक प्रतिलाभ दर मूल्य निर्धारण

यह मूल्य निर्धारण तकनीक उत्पादन के लागत पर भी आधारित है। इस पद्धति का उपयोग करके उत्पाद का मूल्य निर्धारित करने की आधारभूत प्रक्रिया पूर्ण-लागत मूल्य निर्धारण के सदृश है। इन

दो पद्धतियों के बीच सिर्फ एक अंतर कीमत-लागत अंतर निर्धारित करने का है।

निर्धारित मानक प्रतिलाभ दर मूल्य निर्धारण कीमत-लागत अंतर निर्धारित करने में फर्म द्वारा किए गए प्रारम्भिक निवेश पर वांछित प्रतिलाभ की दर पर विचार करता है।

मान लीजिए, K फर्म द्वारा किया गया निवेश है और r k पर नियोजित प्रतिलाभ की दर है। इस प्रकार फर्म के लिए वांछित लाभ r k होगा। पुन: यदि निर्गत के दिए गए स्तर के लिए TC उत्पादन की कुल लागत है और m मूल्य निर्धारण के लिए कीमत-लागत अंतर है, तब यह समीकरण होगा $m\,(TC) = r\,k$

इससे एक सरल सूत्र निकलता है जो कीमत-लागत अंतर को लागू करना सरल बना देता है और इससे निवेश पर वांछित प्रतिलाभ दर प्राप्त होती है, अर्थात्

$$\text{कीमत-लागत अंतर } (m) = \frac{\text{निवेश की गई पूंजी } (K)}{\text{कुल लागत } (TC)} \times \text{नियोजित प्रतिलाभ दर } (r)$$

मान लीजिए निवेश की गई पूँजी 10 करोड़ रु. है और निर्गत की दी गई मात्रा की कुल लागत 15 करोड़ रु. है। यदि निर्धारित मानक प्रतिलाभ दर 20 प्रतिशत है, तब उपर्युक्त सूत्र का उपयोग करने से फर्म का कीमत-लागत अंतर यह होगा :

$$\frac{10 \text{ करोड़ रु.}}{15 \text{ करोड़ रु.}} \times (20\%) = 13.33\%$$

15 करोड़ रु.

यदि प्रति इकाई निर्गत कुल लागत 30 रु. है, तब उत्पाद का मूल्य 30 रु. + 30 रु. × 0.1333 = 33.99 रु. होना चाहिए जिससे कि 10 करोड़ रु. के पूँजी निवेश पर 20 प्रतिशत प्रतिलाभ सुनिश्चित किया जा सके।

निवेश पर नियोजित प्रतिलाभ दर कर की दर को भी हिसाब में लेगा अर्थात् निर्धारित मानक प्रतिलाभ दर पद्धति का उपयोग करके उत्पाद का मूल्य निर्धारित करते समय पूँजी पर सकारात्मक प्रतिलाभ सुनिश्चित करने के लिए यह सकल कारपोरेट आय कर दर होगा।

मूल्य निर्धारण की यह पद्धति अत्यन्त सफल हो सकती है यदि : (क) फर्म अपना मूल्य निर्धारित करने और उस पर नियंत्रण रखने में सक्षम है ; (ख) यह बिक्री आँकड़ों का सफलतापूर्वक आकलन करने में सक्षम है, और (ग) यह अपने कार्य संचालन के प्रति दूर-दृष्टि रखने में सक्षम है, अर्थात् फर्म को सचेत होना चाहिए कि आवश्यकता से अधिक लाभ उद्योग में नए फर्मों के प्रवेश को प्रेरित करेगा, जो प्रतिस्पर्धा में वृद्धि करेगा और इस प्रकार दीर्घकाल में लाभ में कमी होगी। पुन:, यदि फर्म आवश्यकता से अधिक लाभ लेती है तो यह सार्वजनिक आलोचना का भी शिकार हो सकती है।

इस पद्धति की भी वही सीमाएँ हैं जो लागतोपरि मूल्यनिर्धारण तकनीक की है। यह अनुकूलतम मूल्य निर्धारण तकनीक नहीं है, किंतु उत्पाद बाज़ार की अपूर्णताओं के कारण उत्पादों के मूल्य निर्धारण के लिए यह उपयोगी अनुभव सिद्ध नियम है।

23.6.4 स्वीकृत मूल्य-निर्धारण

इस पद्धति का उस स्थिति में प्रयोग किया जाता है जब किसी मूल्य-नेतृत्व का प्रादुर्भाव हो चुका

का अनुसरण मात्र करती हैं। इस मूल्य निर्धारण तकनीक का मुख्य उद्देश्य हानिप्रद कड़ी प्रतियोगिता से बचना है। जैसे-जैसे प्रतियोगिता बढ़ती है, एक-दूसरे के प्रति फर्म की सजगता भी बढ़ती है और इसका वांछित उद्देश्य हानिप्रद प्रतियोगिता को सीमित करना होता है। फर्मों के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं हो सकता है किंतु एक अनौपचारिक समझौता हो जाता है तथा नेता का प्रादुर्भाव होता है। यह आवश्यक नहीं है कि अग्रणी फर्म उद्योग में सबसे बड़ी हो। तथापि, मूल्य स्वीकार करने में मूल्य अनुसरणकर्त्ता को अपने दीर्घकालीन लाभप्रदता के बारे में सोचना पड़ता है। उसके लिए पर्याप्त लाभप्रदता होनी चाहिए जिससे कि फर्म में नया पूँजी निवेश किया जा सके तथा पहले निवेश की जा चुकी पूँजी को अक्षुण्ण बनाए रखा जा सके।

23.6.5 प्रचलित दर मूल्य निर्धारण

यह एक प्रकार का स्वीकृत मूल्य ही है जो प्रतियोगिता-उन्मुखी होता है। इस प्रणाली में, उद्योग द्वारा लिए जा रहे औसत मूल्य को फर्म स्वयं के लिए स्वीकार कर लेती है। पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत, वस्तु का मूल्य निर्धारण बाज़ार की माँग और बाज़ार की पूर्ति के संतुलन से निर्धारित होता है। इस प्रकार, नियत बाज़ार मूल्य फर्मों द्वारा स्वीकार किया जाता है। वे अकेले वस्तु के मूल्य में कोई भी परिवर्तन करने में सक्षम नहीं होंगे। इससे पता चलता है कि प्रचलित दर मूल्य के स्वीकार किए जाने की मुख्य शर्त यह है कि बाज़ार को अत्यधिक प्रतियोगी होना चाहिए तथा सजातीय वस्तुएँ होनी चाहिए। तथापि, कुछ अन्य परिस्थितियाँ भी हैं जिनमें मूल्य निर्धारण की इस तकनीक को स्वीकार किया जाता है। विशेषकर, यदि लागत की माप करना कठिन है और यह जानना भी कठिन है कि खरीदार तथा विक्रेता किस तरह से मूल्य विभेदों पर प्रतिक्रिया करते हैं, उत्पादक प्रचलित-दर मूल्य निर्धारण रीति का अनुसरण करने को बाध्य होगा।

बोध प्रश्न 4

1) कीमत-लागत अंतर मूल्य निर्धारण पद्धति का संक्षेप में वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) वर्धमान लागत मूल्य निर्धारण तकनीक का किस तरह से उपयोग किया जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) प्रचलित-दर मूल्य निर्धारण का संक्षेप में वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

23.7 सारांश

किसी भी उत्पादक के लिए मूल्य निर्धारण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण निर्णय है। एक उत्पादक के सम्मुख हमेशा विभिन्न सैद्धान्तिक मॉडल उपलब्ध होते हैं जो अनुकूलतम निर्णय लेने में उसकी सहायता करते हैं। नि:संदेह, सैद्धान्तिक मॉडल, विभिन्न बाज़ार संरचनाओं के अन्तर्गत मूल्य और निर्गत निर्धारण की प्रक्रिया का अवधारणात्मक बोध प्रस्तुत करते हैं। तथापि, फर्म द्वारा वास्तविक निर्णय करने में ये बहुत ही कम उपयोगी होते हैं। व्यवहार में, उत्पादक मूल्य निर्धारण के लिए सरल तदर्थ प्रक्रियाओं का उपयोग करते हैं जिसमें मुख्य रूप से कीमत-लागत अंतर पद्धति, या तो 'पूर्ण लागत' अथवा 'लागतोपरि' मूल्य निर्धारण अथवा लक्षित निर्धारित प्रतिलाभ दर मॉडल है। किंतु मूल्य निर्धारण में अधिक विविधता होने और अनुभव सिद्ध सरल नियमों के व्यापक अनुसरण के बावजूद भी मूल्य और लाभ-गुंजाइश में सिद्धान्त के अनुरूप लागत और माँग परिवर्तन में कमी-वृद्धि होती रहती है।

23.8 शब्दावली

मूल्य : वस्तु अथवा आदान के मूल्य से यह पता चलता है कि वस्तु अथवा सेवा प्राप्त करने के लिए कितना परित्याग करना है।

बाज़ार : कोई भी संदर्भ जिसमें वस्तुओं और सेवाओं की बिक्री और खरीद की जाती है।

बाज़ार शक्तियाँ : बाज़ार आपूर्ति और माँग के निर्बाध होने से उत्पन्न दबाव जो मूल्यों और/अथवा कारोबार की मात्रा में समायोजन प्रेरित करती है।

कीमत लागत अंतर : मूल्य का वह भाग जो एक विक्रेता उपरिव्ययों को पूरा करने और शुद्ध लाभ गुंजाइश अर्जित करने के लिए औसत परिवर्ती लागतों में जोड़ता है।

मूल्य विभेदीकरण : फर्म द्वारा खरीदारों के विभिन्न समूहों से अलग-अलग मूल्य वसूल करने की प्रथा।

मूल्य नेतृत्व : एक उद्योग में वह स्थिति जिसमें एक फर्म मूल्य परिवर्तन करने में पहल करती है और अन्य फर्म उसका अनुसरण करती हैं।

मुक्त बाज़ार प्रणाली के संदर्भ में इसका उपयोग किया जाता है और वह रीति जिसमें मूल्य स्वचालित संकेत के रूप में काम करता है जो अलग-अलग निर्णय करने वाली इकाइयों के कार्रवाइयों में समन्वय करता है।

23.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें और संदर्भ

डोनाल्ड ए. हे और डेरेक आई मॉरिस, (1984). *इण्डस्ट्रियल इकनॉमिक्स - थ्योरी एण्ड एवीडेन्स,* ऑक्सफोर्ड, लंदन अध्याय 3, 4 और 5

पी.आई. डिवाइन इत्यादि, (1976). *ऐन इण्ट्रोडक्शन टू इण्डस्ट्रियल इकनॉमिक्स,* (जॉर्ज एलेन, लंदन, अध्याय 2 और 6)

आर.आर. बर्थवाल, (1984). *इण्डस्ट्रियल इकनॉमिक्स, विली ईस्टर्न,* नई दिल्ली, अध्याय 9 और 14

श्रीनिवास वाई. ठाकुर, (1985). *इण्डस्ट्रियलाइजेशन एण्ड इकनॉमिक डेवलपमेण्ट,* पॉपुलर, बॉम्बे

आई.सी. धींगरा, (2001). *एलीमेण्ट्स ऑफ इकोनॉमिक्स,* सुल्तान चंद, नई दिल्ली, अध्याय 6 से 9

23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) भाग 23.1 देखिए।
2) भाग 23.2 देखिए।
3) उपभाग 23.2.1 देखिए।

बोध प्रश्न 2

1) उपभाग 23.3.1 देखिए।
2) उपभाग 23.3.2 देखिए।
3) उपभाग 23.3.3 देखिए।

बोध प्रश्न 3

1) उपभाग 23.5.1 देखिए।
2) उपभाग 23.5.1 देखिए।
3. उपभाग 23.5.1 देखिए।

बोध प्रश्न 4

1) उपभाग 23.6.1 देखिए।
2) उपभाग 23.6.2 देखिए।
3) उपभाग 23.6.5 देखिए।